अध्याय : तृतीय

राजनैतिक नेतृत्व की भूमिका एवं प्रकार्यान्वयन

1–यदवदा जेल प्रकरण :

सरदार पटेल 16 माह (जनवरी 1932 से मई 1933 तक) गाँधी जी के साथ यरवदा जेल मं रहे। यह उनके जीवन की एक महत्वपूर्ण घटना थी क्योंकि गाँधी जी ने पटेल के जीवन को प्रभावित किया। साबरमती में पटेल ने सिगरेट पीना सदा के लिए छोड़ दी थी। यरवदा जेल में चाय छोड़ दी।[1] 8 मई, 1932 को गाँधी जी को छोड़ दिया गया तो उन्होंने सरदार पटेल के सम्बन्ध में लिखा–''जेल में सरदार वल्लभभाई के साथ रहने का अवसर मिला, यह बड़े सौभाग्य की बात है। उनकी शूरवीरता और ज्वलन्त देशभक्ति का तो मुझे पता था, परन्तु जिन सोलह महीनों में उनके साथ जिस तरह से रहने का सौभाग्य मुझे मिला उस तरह से मैं उनके साथ कभी नहीं रहा था। उन्होंने मुझ पर जो हार्दिक ममता और प्रेम बरसाया, उससे तो मुझे अपनी प्यारी माँ का स्मरण हो जाता था। मैं नहीं जानता था कि उनमें ऐसी माता के गुण भी होंगे। मुझे कुछ भी होता कि वे बिस्तर से उठ बैठते। मेरी सुविधा की जरा सी बात की भी वे खुद चिन्ता रखते थे.....जब भी राजनैतिक प्रश्नों की चर्चा करते थे, तब उन्हें सरकार की कठिनाइयों का बराबर ख्याल रहता था। बारदौली और खेड़ा के किसानों की वे जैसी चिन्ता करते थे उसे मैं कभी भूल नहीं सकूँगा।''[2] 1 अगस्त, 1933 को पटेल को यरवदा जेल से हटाकर नासिक जेल में रखा गया जहाँ से उन्हें 14 जुलाई, 1934 को मुक्त किया गया।[3] जनवरी 1932 से जुलाई 1934 को ढाई वर्ष के समय में देश की राजनीति में महत्वपूर्ण घटनाएं घटित हो चुकी थीं। 16 अगस्त 1932 को सरकार ने साम्प्रदायिक के पंचाट घोषित किया जिसके विरोध में गाँधी जी ने

आमरण अनशन और पूना समझौता हुआ। 15 मार्च 1933 को ब्रिटिश सरकार ने एक श्वेत पत्र प्रकाशित किया जिसमें भावी संविधान की रूपरेखा प्रस्तुत की गई। कांग्रेस के अन्दर डा0 अन्सारी की अध्यक्षता में एक वर्ग स्वराज्य दल को पुनर्जीवित करना चाहता था। ऐसा प्रतीत होता जा रहा है कि कांग्रेस संगठन पर गाँधी जी की पकड़ ढीली पड़ रही थी। सरदार पटेल गाँधी जी से सहमत न थे कि वे वास्तविकता से आँखें बन्द कर बार–बार उपवास करें।[4]

जब पटेल यरवदा जेल में थे, 1 नवम्बर, 1933 को उनकी माता का देहान्त हो गया और जब वे नासिक जेल में थे, उनके अग्रज भाई विट्ठलभाई पटेल का 20 अक्टूबर, 1933 को वियना में देहान्त हो गया। पटेल अपने भाई के बम्बई में दाह संस्कार में इसलिए शामिल न हो सके क्योंकि उन्होंने शर्त के साथ मुक्त होने के सरकार के आदेश को अस्वीकार कर दिया था।

गोलमेज कान्फ्रेन्स की रिपोर्ट पर कम्यूनल एवार्ड के रूप में अछूतों को पृथक निर्वाचन क्षेत्रों द्वारा आरक्षित सीटों का अधिकार दे दिया गया। इस एवार्ड की धारा 9 के अनुसार दलित वर्गों को अपने मतों से अपने ही में से प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया गया। दूसरे शब्दों में उम्मीदवार भी दलित वर्ग का और मतदाता भी केवल दलित वर्ग के ही।[5]

गाँधी जी उस समय यरवदा जेल में थे। कम्यूनल एवार्ड की घोषणा होते ही पहले तो उन्होंने प्रधानमन्त्री को पत्र लिखकर इसे बदलवाने का प्रयास किया, परन्तु जब उन्होंने देखा कि यह निर्णय बदला नहीं जा रहा तो उन्होंने मरण व्रत रखने की घोषणा कर दी।

डॉ0 अम्बेडकर ने बयान जारी किया कि यदि गाँधी जी भारती की स्वतन्त्रता के लिए मरण व्रत रखते तो वह न्यायोचित थे, परन्तु यह एक

पीड़ादाय आश्चर्य है कि गाँधी जी ने केवल अछूतों को ही अपने विरोध के लिए चुना है जबकि ईसाइयों, मुसलमानों और सिखों को मिले इसी (पृथक निर्वाचन के) अधिकार के बारे में गाँधी जी ने कोई आपत्ति नहीं की। उन्होंने आगे कहा कि महात्मा गाँधी कोई अमर व्यक्ति नहीं हैं। भारत में ऐसे अनेकों महात्मा आये और अनेकों चले गये, जिनका लक्ष्य छुआछूत को समाप्त करना था, परन्तु अछूत, अछूत ही रहे। उन्होंने कहा कि गाँधी जी के प्राण बचाने के लिए अछूतों के हितों की बलि नहीं दे सकते।[6]

2—कांग्रेस मंत्री परिषद् के पथ प्रदर्शक :

जुलाई 1937 में कांग्रेस ने बहुमत वाले प्रान्तों में पद ग्रहण किया। पद ग्रहण से राष्ट्रीय जीवन में एक नई प्रक्रिया आरम्भ हुई। अभी तक कांग्रेस असहयोग और सविनय अवज्ञा आन्दोलन में विश्वास करती थी। कांग्रेस को शासन चलाने का अनुभव न था। शासन की जटिलताओं से उनका सम्पर्क न तो गहरा था और न व्यापक। दूसरी ओर जनता की आशायें बहुत बढ़ी—चढ़ी थीं। किसानों को राहत, शराब बन्दी, गैरकानूनी वसूलयाबी पर रोक, उद्योग धन्धों का विकास, शिक्षा का पुनर्संगठन, ग्राम पंचायतों की स्थापना, सत्ता न्याय, हरिजनों तथा पिछड़ी जातियों का उत्थान आदि अनेक महत्वपूर्ण कार्य करने थे। लगभग सभी प्रान्तों में राजनैतिक बन्दी थे जिसमें कुछ हिंसा के दोषी थे। वे लोग कांग्रेस द्वारा मुक्त होने की प्रतीक्षा कर रहे थे।[7] कांग्रेस कार्यसमिति ने एक तीन सदस्यीय उपसमिति गठित की जिसके सरदार वल्लभभाई पटेल, डा0 राजेन्द्र प्रसाद और अब्दुल कलाम आजाद सदस्य थे। समिति का कार्य प्रान्तों में कांग्रेस मन्त्रिमण्डल तथा धारा सभाओं के सदस्यों के कार्यों को नियन्त्रित करना तथा अनुशासन बनाये रखना था। कार्य सुविधा हेतु पटेल के अधीन बम्बई, मद्रास, मध्य प्रान्त और सिन्ध के प्रान्त थे जबकि

मौलाना आजाद को बंगाल, संयुक्त प्रान्त, पंजाब व सीमा प्रान्त तथा डा0 राजेन्द्र प्रसाद को बिहार का प्रान्त दे दिया गया। उपसमिति के कार्य का मुख्य भार सरदार पटेल पर ही था। सरदार पटेल निष्पक्षता एवं विवेक से कार्य किया परन्तु कई मामलों पर उनके निर्णय ने उन्हें विवादस्पद बना दिया।

(अ) नरीमन काण्ड :

उस समय बम्बई प्रेसीडेन्सी में बाम्बे शहर, गुजरात, महाराष्ट्र तथा कर्नाटक का क्षेत्र सम्मिलित था। के0 एफ0 नरीमन बम्बई के एक प्रतिष्ठित वकील थे जो बम्बई प्रान्त के पार्लमेण्टरी बोर्ड के अध्यक्ष थे तथा स्वराज्य दल के समय धारा सभा में उस दल के नेता रह चुके थे। 2 मार्च 1937 को बम्बई में धारा सभा के कांग्रेस सदस्यों की एक बैठक हुई, जिसमें बाला साहब खरे सर्वसम्मति से बम्बई प्रान्त के धारा सभा दल का नेता चुना गया। नरीमन उस बैठक में उपस्थित थे क्योंकि उन्हें आभास हो गया था कि उन्हें नेता नहीं चुना जाएगा। दूसरे ही दिन गुजराती में निकलने वाले पारसी समाचार पत्रों तथा अंग्रेजों पर ''बाम्बे सेंटीनल'' ने तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा कि नरीमन के साथ अन्याय हुआ है। धारा सभा के सदस्य नरीमन को नेता चुनना चाहते थे परन्तु सरदार पटेल ने सदस्यों पर अनुचित प्रभाव डालकर उन्हें नेता नहीं चुनने दिया। पद ग्रहण सम्बन्धी महत्वपूर्ण निर्णय हेतु 17 मार्च को दिल्ली में महासमिति की एक बैठक बुलाई थी तथा धारा सभाओं के चुनाव में विजयी कांग्रेस सदस्यों का एक सम्मेलन हुआ। 16 मार्च को बम्बई प्रान्त के दिल्ली में उपस्थित 47 धारा सदस्यों ने एक वक्तव्य प्रकाशित किया जिसमें बम्बई के कुछ समाचार पत्रों द्वारा सरदार पटेल पर मिथ्या दोषारोपण पर खेद प्रकट किया गया। सदस्यों के अनुसार खरे को सर्वसम्मति से नेता चुना गया

तथा सरदार की तरफ से किसी भी सदस्य पर कोई अनुचित दबाव डाले जाने की बात सर्वथा निराधार तथा झूठी है।[8] इस बीच कुछ पत्र कांग्रेस अध्यक्ष तथा कार्यसमिति के सदस्यों का प्राप्त हुए जिसमें नरीमन के साथ अन्याय के आरोप लगाये गये। कार्यसमिति ने एक प्रस्ताव द्वारा बम्बई के समाचार पत्रों द्वारा प्रचार पर आश्चर्य तथा दुख प्रकट किया। जाँच के उपरान्त समिति को विश्वास हो गया कि बम्बई की धारा सभा के कांग्रेस दल के स्वतन्त्र रूप में विचारपूर्ण और सर्वसम्मति से चुनाव किया है। उसमें दखल देने का उसे कोई कारण नहीं दिखायी देता है।[9] यद्यपि 23 मार्च को नरीमन ने एक वक्तव्य द्वारा कार्य समिति के निर्णय को स्वीकार कर करने तथा विवाद समाप्त करने की घोषणा की, परन्तु 12 मई को कांग्रेस अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू को एक लम्बा पत्र लिखकर नरीमन ने मामले को पुनर्जीवित कर दिया। नरीमन का कहना था कि विवाद के सम्बन्ध में उन्हें कुछ नये तथ्यों का पता चला है। अपने पत्र में नरीमन ने कहा कि 8 मार्च को महाराष्ट्र के 30 धारासभा सदस्यों ने उन्हें (नरीमन) को नेता चुनने का निश्चय किया जो मराठी पत्र ''नवाकाल'' तथा कुछ अन्य समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ। 9 मार्च को सरदार पटेल को जब ज्ञात हुआ तो उसी दिन उन्होंने दो तार दिये। शंकरराव देव को तार में सन्देश दिया–''पूना की खबरों से मुझे चिन्ता होती है। अच्युत और आप मुझसे बम्बई में गुरूवार (तारीख 11) को मिलिए।'' दूसरा तार गंगाध राव देशपाण्डे को भेजा जिसमें कहा गया–''मुझसे गुरूवार को बम्बई में मिलिए।''[10] नरीमन का आरोप था कि इन तारों से ''सरदार वल्लभभाई के अनुचित व्यवहार का नया प्रमाण मेरे हाथ लगा है।''[11] बम्बई के समाचार पत्रों ने इन तारों को लेकर तिल का ताड़ बना दिया और सरदार पटेल पर तरह–तरह के आरोप लगाने प्रारम्भ कर दिये। नेहरू ने पत्र का उत्तर 17 जून को दिया क्योंकि जब मई में नरीमन ने पत्र लिखा था, नेहरू वर्मा–मलाया की यात्रा पर थे। नेहरू ने कहा–''एक व्यक्तिगत बात को आप जरूरत से ज्यादा

तूल दे रहे हैं और किसी ठोस आधार के बिना जिम्मेदार आदमी पर गम्भीर आरोप लगा रहे हैं।[12] एक वक्तव्य में नेहरू ने तारों का स्पष्टीकरण करते हुए कहा कि–''जिस दिन उन्होंने (पटेल) तार दिये थे उस दिन उन्होंने मुझे पत्र भी लिखा था कि महाराष्ट्र में ऐसी बातें हो रही हैं और उन्हें रोकने के लिए मैंने श्री गंगाधर राव देशपाण्डे को बम्बई बुलाया है।[13]

चर्चा में कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक 5–8 जुलाई को हुई जिसमें नरीमन के आरोपों को निराधार पाया गया। 9 जुलाई को पटेल ने वर्धा से प्रकाशित एक वक्तव्य में कहा कि अब तक उन्होंने जानबूझ कर मौन रखा है, परन्तु अब जनता को जानकारी देना आवश्यक है। उन्होंने ''प्रत्यक्ष'' या परोक्ष किसी भी तरह से नेता के चुनाव पर असर नहीं डाला। सरदार पटेल ने नरीमन पर आरोप लगाया कि नरीमन स्वयं 4 मार्च 1937 को सरदार पटेल से मिले थे तथा उनसे नेता चुने जाने में सहायता मांगी जिसे उन्होंने इन्कार कर दिया।[14]

नरीमन ने पटेल के आरोप को निराधार बताकर फिर समाचार पत्रों में वक्तव्यों की झड़ी लगा दी। बाध्य होकर नेहरू ने 13 जुलाई को एक कठोर पत्र लिखा। अपने पत्र में नेहरू ने कहा–''मैं देख रहा हूँ कि आपने फिर जुनूनी चर्चा शुरू कर दी है। आपके पक्ष के अखबार तो मानों सभी का खून पीने को तैयार हो गये हैं...ऐसे कुछ तथ्य तुच्छ व्यक्तिग मामले के बारे में बम्बई के अखबारों के पृष्ठ के पृष्ठ रंग जाये, यह मेरी समझ में नहीं आता...मैं आपसे अनुरोध बिल्कुल नहीं करता कि आप जाँच की बात छोड़ दें। दुर्भाग्य से कार्य समिति पर आपका विश्वास नहीं रहा तो फिर मैं आपसे यही कहूँगा कि आप प्रिवी कौंसिल में जाइयेगा लीग आफ नेशन्स के पास जाइये या जिस किसी मंच पर आपका विश्वास हो, उसके पास जाइये।[15]

इस पत्र के पश्चात् नरीमन ने नेहरू को छोड़ दिया तथा गाँधी जी को लम्बे पत्र लिखना प्रारम्भ किया। 17 अगस्त को नरीमन ने अपने पत्र में गाँधी जी को सूचित किया कि–''पार्लमेण्टरी कमेटी के अध्यक्ष होने के कारण सरदार को विशाल और निरंकुश अधिकार है।'' अतः धारासभा के सदस्य साक्ष्य देने में घबरायेंगे। नरीमन ने तो गाँधी जी की निष्पक्षता पर शक करते हुए लिखा कि–''मेरे नाम आपके पत्रों से मुझे ऐसा लगता है कि आपके मन में मेरे विरुद्ध पूर्वाग्रह हो गया है।[16] अन्त में गाँधी जी एवं डी0 एम0 बहादुर ने समस्त जाँच की। जाँच पंच को दो प्रश्नों पर निर्णय देना था। प्रथम, नवम्बर 1934 में केन्द्रीय धरासभा के लिए बम्बई से चुनाव में नरीमन ने अपने आचरण से कांग्रेस को धोखा दिया था या नहीं। द्वितीय, क्या 1937 में बम्बई की धारासभा के कांग्रेस दल के नेता के चुनाव में सरदार पटेल ने अनुचित दबाव डालकर नरीमन को नेता नहीं चुनने दिया? सरदार ने प्रथम प्रश्न पर 25 पृष्ठों का तथा द्वितीय प्रश्न पर 17 पृष्ठों का आलेख प्रस्तुत किया। प्रथम प्रश्न पर पटेल का आरोप था कि 1934 में कांग्रेस पार्ल्यामेण्टरी बोर्ड ने नरीमन और डा0 जी0 बी0 देशमुख को बम्बई से केन्द्रीय धारासभा के लिए प्रत्याशी चुना था। परन्तु उन्होंने अपनी उम्मीदवारी वापस लेने के लिए अनेक प्रयत्न किये और अन्त में मतदाता सूची में पता सही न होने के कारण जानबूझकर नाम वापस लेकर कांग्रेस की प्रतिष्ठा को आघात पहुँचाया। यही नहीं चुनाव वाले दिन दूषित प्रचार करके उन्होंने एक अन्य पारसी प्रत्याशी सर कावसजी की परोक्ष रूप से सहायता की जिसके परिणामस्वरूप के0 एम0 मुंशी पराजित हुए।

दूसरे प्रश्न पर खरे, देशमुख, शंकरराव देव, हंस मेहता, अच्युत पटवर्धन, के0 एम0 मुंशी, एस0 के0 पाटिल, सर सावजी जहाँगीर आदि महत्वपूर्ण व्यक्तियों ने अपने बयान दिये।[17] बहादुर जी ने अपने निर्णय में कहा

कि–''1934 की बड़ी धारासभा के चुनाव के मामले में श्री नरीमन पर जो आरोप लगाये गये हैं वे सत्य सिद्ध होते हैं और 1937 के नेता के चुनाव के बारे में श्री नरीमन ने सरदार वल्लभभाई पटेल पर जो आक्षेप किये हैं वो सिद्ध नहीं होते।[18] गाँधी जी ने इस निर्णय के साथ अपनी सहमति प्रकट की। नवम्बर 1937 को कलकत्ते में कांग्रेस कार्यसमिति ने नरीमन के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही का अनुमोदन प्रकट करते हुए उन्हें भविष्य में ''कांग्रेस में कोई जिम्मेदारी और विश्वास का स्थान लेने के लिए अयोग्य ठहराया।''[19] कार्यसमिति के इस प्रस्ताव ने नरीमन तथा सरदार पटेल के मध्य खाई को और बढ़ा दिया। परन्तु दस वर्ष पश्चात् 1947 के अन्त में नरीमन ने अपने व्यवहार के लिए सरदार से खेद प्रकट किया और पुनः कांग्रेस में शामिल हो गये।

(ब) मध्य प्रान्त का संकट :

प्रान्तीय मंत्रिमण्डल के संचालन में सबसे अधिक गम्भीर समस्या मध्य प्रान्त में हुई जहाँ डा0 एन0 बी0 खरे मुख्यमंत्री थे। भाषा की दृष्टि से मध्य एक मिश्रित इकाई थी जिसमें महाकौशल अथवा हिन्दी मध्य प्रान्त, नागपुर अथवा मराठी मध्य प्रान्त तथा बरार सम्मिलित थे। 1937 के प्रान्तीय धारासभा चुनाव में कांग्रेस ने 122 में 72 स्थान प्राप्त किये थे जिसमें महाकौशल क्षेत्र के 42 सदस्य थे फिर भी मार्च 1937 में डा0 एन0 बी0 खरे को सर्वसम्मति से कांग्रेस दल का नेता चुना गया। डेविड बाकर तथा बी0 आर0 टामिल्सन ने लिखा है कि–''मराठी क्षेत्र के खरे का चुनाव इस कारण सम्भव हुआ क्योंकि महाकौशल क्षेत्र के रविशंकर शुक्ला के विरोधी शुक्ला की शक्ति तथा प्रभाव को कम करना चाहते थे।''[20] जबकि डी0 पी0 मिश्र का कथन है कि महाकौशल के प्रतिनिधियों ने कभी भी क्षेत्र या जाति के आधार पर नहीं

सोचा। शुक्ला को इसलिए अस्वीकार किया गया क्योंकि सदस्य उनके पुराने इतिहास से भली–भाँति परिचित थे।[21] मत्रिमण्डल का गठन सरदार सरदार पटेल की स्वीकृति से हुआ। मंत्रिमण्डल में बरार क्षेत्र के पी0 वी0 गोले तथा आर0 आर0 देशमुख तथा महाकौशल क्षेत्र के आर0 एस0 शुक्ला, डी0 पी0 मिश्रा तथा डी0 के0 मेहता मंत्री थे। युसुफ मुसलमानों का प्रतिनिधित्व करते थे। प्रारम्भ से ही मंत्रिमण्डल में आन्तरिक मतभेद था। यद्यपि खरे महाकौशल क्षेत्र के सदस्यों के समर्थन से मुख्यमंत्री बनें थे, परन्तु मुख्यमंत्री बननेके पश्चात् उन्होंने अपने व्यक्तियों को महत्वपूर्ण स्थानों पर नियुक्त किया तथा डी0 पी0 मिश्र के महत्व को घटाने का प्रयास किया। हरिपुरा कांग्रेस अधिवेशन के पश्चात् फरवरी 1938 में मुख्यमंत्री खरे के विरुद्ध शरीफ प्रकरण, उमरी की हत्या, जबलपुर के दंगे आदि को लेकर असन्तोष फैल गया। यह असन्तोष धीरे–धीरे बढ़ता रहा और मर्ह 1938 में विस्फोटक बन गया।

असन्तोष का आरम्भ कानून तथा न्याय विभाग के मन्त्री युसुफ शरीफ के व्यवहार से हुआ। शरीफ ने एक तेरह वर्ष की हरिजन लड़की पर बलात्कार करने के अपराध पर सजा पाये हुए कैदियों को उनकी एक तिहाई सजा पूरी होने के पूर्व ही गवर्नर से अनुमति लेकर उनकी सजा माफ करा दी। परिणामस्वरूप धारासभा के बाहर तथा मन्त्री के कक्ष में हिन्दू जनता ने नारे लगाये। सरदार पटेल को जब सूचना मिली उन्होंने न्यायमंत्री शरीफ से स्पष्टीकरण मांगा तथा मध्य प्रान्त की सरकार को तत्काल इस मामले को अपने हाथ में लेने की सलाह दी। मुख्यमंत्री शरीफ को बचाना चाहते थे। मुस्लिम लीग ने प्रचार किया क्योंकि मंत्री तथा कैदी मुसलमान हैं, अतः हिन्दू संगठन कांग्रेस मन्त्री के अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप कर रही है। कांग्रेस कार्यसमिति सू सम्पूर्ण जांच की कलकत्ता उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश सर मन्मथनाथ मुखर्जी को सौंप दी जिन्होंने 07 मई को अपनी

रिपोर्ट में शरीफ को दोषी पाया तथा शरीफ को त्यागपत्र देने के लिए बाध्य होना पड़ा।

शरीफ काण्ड सुलझ न पाया था कि मंत्रिमण्डल के आन्तरिक मतभेद उभरकर सामने आ गये। 7 मई 1938 को डी0 पी0 मिश्र ने मुख्यमंत्री खरे को एक पत्र लिखकर जबलपुर के दंगों से उनकी भूमिका पर असन्तोष व्यक्त किया। 8 मई को मंत्रिमण्डल के चार सदस्यों गोले, शुक्ल, मिश्र तथा मेहता ने सम्मिलित रूप से डा0 खरे को एक पत्र लिखकर मंत्रिमण्डल से त्यागपत्र देने का संकेत दिया। त्यागपत्र के प्रमुख कारण थे, डा0 खरे द्वारा संचालित गृह विभाग की कमजोरियाँ, जबलपुर के दंगे के बाद नरमी का व्यवहार, मंत्रिमण्डल से महत्वपूर्ण मामलों पर परामर्श न करना, डा0 खरे की नौकरशाही पर निर्भरता, शरीफ काण्ड में वर्धा के डिप्टी कमिश्नर से जाँच आदि। इसके अतिरिक्त कई मंत्रियों पर रिश्वत लेने तथा सगे–सम्बन्धियों के साथ पक्षपात की शिकायतें भी सरदार पटेल के पास आई। परिणामस्वरूप मध्य प्रान्त में कांग्रेस की प्रतिष्ठा तेजी से गिर रही थी। अतः सरदार ने 24 मई 1938 को मध्य प्रान्त की धारासभा के सदस्यों की एक बैठक पंचमढ़ी में बुलाई, जहाँ मंत्रियों में आपसी समझौता हो गया। सरदार ने एक वक्तव्य प्रकाशित किया जिसमें उन्होंने कहा–''शरीफ साहब के मामले का कांग्रेस कार्यसमिति ने अभी–अभी निपटारा किया है। हमने सब मन्त्रियों से एक साथ और अलग–अलग बातें कर ली है। सारे प्रश्नों का समाधान करने में हमें कठिनाई तो हुई है। फिर भी हमें यह बताते हुए आनन्द होता है कि सारे मतभेद मिट गये हैं। मंत्रियों ने हमें विश्वास दिलाया है कि वे आपस में मतभेद भूलाकर सहयोग से काम करेंगे।[22] मंत्रियों के विरुद्ध रिश्वत के आरोपों की चर्चा करते हुए पटेल ने कहा कि–''कुछ आक्षेप तो बिना विचार और द्वेषपूर्वक किये गये थे। उनके समर्थन में हमें रत्तीभर भी सबूत नहीं मिला।[23]

यह आशा की जाती थी कि समझौते के पश्चात् मंत्रिमण्डल एकजुट होकर कार्य करेगा, पर ऐसा नहीं हुआ। कुछ ही समय के पश्चात् पार्लमेण्टरी बोर्ड के अध्यक्ष की हैसियत से सरदार के पास शिकायतें आने लगीं कि डा0 खरे के समर्थक दो मन्त्री गोले तथा देशमुख ने त्यागपत्र दे दिया है। वास्तविकता यह थी कि डा0 खरे मंत्रिमण्डल के कुछ साथियों से मुक्त होना चाहते थे। 20 जुलाई को डा0 खरे ने डा0 रविशंकर शुक्ल, डी0 पी0 मिश्र एवं डी0 के0 मेहता को पत्र लिखकर सलाह दी कि त्यागपत्र दे देवें। डा0 खरे का तर्क था क्योंकि वे मुख्यमंत्री पत्र से त्यागपत्र दे रहे हैं। संसदीय परम्परा के अनुसार समस्त मंत्रियों को त्यागपत्र दे देना चाहिए। वर्धा में 23 जुलाई को कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक होने वाली थी। मंत्रियों ने इस आधार पर त्यागपत्र देने से इन्कार कर दिया कि उनके त्यागपत्र देने या न देने से निर्णय अन्तिम रूप से, अखिल भारतीय कांग्रेस पार्लमेण्टरी समिति और कार्यसमिति ही कर सकती है। डा0 खरे को भय था कि कांग्रेस कार्यसमिति उनके विरुद्ध निर्णय ले सकती है। अतः 20 जुलाई को गवर्नर ने उन तीन मंत्रियों को जिन्होंने त्यागपत्र देनें से इन्कार किया था, मंत्रिमण्डल से मुक्त कर दिया। 23 जुलाई को वर्धा में कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक हुई। डा0 खरे उस बैठक में उपस्थित थे। कार्यसमिति ने निर्णय लिया कि दल के नेता ने त्यागपत्र दे दिया है। अतः 27 जुलाई को नया नेता चुनने के लिए धारासभा के कांग्रेस सदस्यों की एक बैठक बुलाई जाय। डा0 खरे को परामर्श दिया गया कि उनको दोबारा नेता बनना शोभा नहीं देगा जिसका डा0 खरे ने विरोध किया। 25 जुलाई को कांग्रेस कार्यसमिति ने डा0 खरे से स्पष्ट रूप से नेता पद का चुनाव न लड़ने का आदेश दिया, परन्तु डा0 खरे अपने निणय पर अडिग थे तथा गाँधी जी से मिलने सेवाग्राम गये। उन्होंने गाँधी जी के परामर्श को अस्वीकार कर दिया। बाध्य होकर कार्यसमिति ने डा0 खरे पर 'गम्भीर अनुशासन भंग' का आरोप लगाया। ''उनके कृत्यों के कारण मध्य

प्रान्त में कांग्रेस उपहास पात्र बनीं और उसकी प्रतिष्ठा को भारी धक्का पहुँचा है।[24] डा0 खरे कांग्रेस अध्यक्ष सुभाष चन्द्र बोस को पत्र लिखकर कांग्रेस कार्यसमिति के निर्णय पर खेदपूर्ण अपनी असहमति व्यक्त की तथा मंत्रिमण्डल के सामूहिक उत्तरदायित्व पर बल दिया।

डा0 खरे ने यह भी कहा–''इसी तरह मैं इस विचार के विरुद्ध हूँ कि कांग्रेस कार्यसमिति या पार्लमेण्टरी कमेटी धारासभा के कांग्रेस दल को अपने नेता के चुनाव के मामलें में कोई आदेश दे सकती है। मेरा यह मत है कि धारासभा के कांग्रेस दल को अपने नेता को चुनने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए और नेता का चुनाव भी किसी किस्म की दखलअंदाजी के बिना अबाधित रूप से होना चाहिए।[25]

रविशंकर शुक्ला कांग्रेस दल के नेता चुने गये तथा पार्लमेण्टरी उपसमिति के परामर्श के बाद नये मन्त्रिमण्डल ने 29 जुलाई 1938 को शपथ ग्रहण की डा0 खरे ने महाराष्ट्र में दौरा किया तथा अपने भाषणों में विशेष रूप से सरदार पटेल की आलोचना की। उन्होंने सरदार पर 'निरंकुशता तथा पक्षपात' का आरोप लगाया तथा कांग्रेस कार्यसमिति की कार्यप्रणाली की आलोचना की तथा उसके निर्णय को 'फासीवाद' की संज्ञा दी। डा0 बी0 आर0 अम्बेडकर, डा0 बी0 एस0 मंजे तथा के0 एम0 नरीमन आदि ने भी कांग्रेस पर प्रहार किये। एंग्लोइण्डियन समाचार पत्रों ने वैधानिक प्रश्न उठाये तथा कांग्रेस कार्यसमिति पर संविधान के विरुद्ध काम करने का आरोप लगाया। डा0 खरे ने 'अपने बचाव' नामक पुस्तिका प्रकाशित करके घटनाओं को इस रूप में प्रस्तुत किया ताकि पाठकों को आभास हो कि कांग्रेस कार्यसमिति और विशेषकर सरदार पटेल ने उनके साथ अन्याय किया। उसमें प्रचार की दृष्टि से उन्होंने के ऐसे आरोप लगाये जो अत्यधिक आपत्तिजनक थे।[26]

वास्तविकता कुछ और थी वह यह कि 1937 में चुनाव हेतु कांग्रेस प्रत्याशियों के चयन को लेकर डा0 खरे सरदार के विरुद्ध थे। डा0 खरे द्वारा प्रस्तुत सूची में सरदार ने बिना कारण बताये पी0 डी0 मारकरे के स्थान पर भीखूलाल चन्दक का नाम जोड़ दिया था। डा0 खरे ने इस कार्य को अनुचित, अनियमित बताते हुए फैजपुर में कांग्रेस अधिवेशन में सरदार पर आरोप लगाते हुए कहा था–''मैंने अखिल भारतीय कांग्रेस पार्लमेण्टरी बोर्ड की बैठक में पटेल से कहा था कि उनका कृत्य ब्रिटिश नौकरशाही से भी बुरा है जिसकी हम भर्त्सना करते हैं क्योंकि किसी भी व्यक्ति को दण्ड देने से पूर्व ब्रिटिश नौकरशाही कम से कम उस व्यक्ति को अपने बचाव का अवसर देती है। इस मामले में पटेल ने इस प्रक्रिया का भी पालन नहीं किया। वास्तविकता यह है कि सरदार पटेल अपनी आलोचना को सहन नहीं कर पाये और उस समय से वे मेरे विरुद्ध दुर्भावना रखते हैं।''[27]

डा0 खरे के आरोपों के विरुद्ध कांगेंस अध्यक्ष सुभाषचन्द्र बोस ने एक लम्बा वक्तव्य प्रकाशित किया। गाँधी जी ने भी ''हरिजन'' में कार्यसमिति के निर्णय के बारे में एक लेख लिखा। कांग्रेस से अलग होने के पश्चात् डा0 खरे हिन्दू महासभा में शामिल हो गये। 1943 में वे वायसराय कौंसिल के सदस्य बन गये। नरीमन तथा डा0 खरे की घटनाओं ने सिद्ध कर दिया कि वल्लभभाई एक कठोर अनुशासक थे।

(स) बिहार तथा संयुक्त प्रान्त में राजनैतिक कैदियों की रिहाई :

चुनावों के समय कांग्रेस ने अपने घोषणापत्र में आश्वासन दिया था कि यदि कांग्रेस सत्ता में आई तो वह तमाम राजनैतिक कैदियों को छोड़ देगी। सत्ता में आने के बाद बम्बई तथा मद्रास में राजनैतिक कैदी छोड़ दिये गये। फरवरी 1938 में 15 कैदी संयुक्त प्रान्त में तथा 21 बिहार में थे जिनमें कुछ

भूख हड़ताल पर बैठ गये संयुक्त प्रान्त में सभी कैदी 1922 के चौरी–चौरा घटना से सम्बन्धित थे। जब बिहार तथा संयुक्त प्रान्त में मन्त्रिमण्डल ने समस्त कैदियों को छोड़ने का निश्चय किया तो दोनों प्रान्तों में कैदी छोड़ दिये जायेंगे तो पंजाब और बंगाल में विषम समस्या पैदा हो जायेगी क्योंकि वहाँ अधिकतर राजनैतिक कैदी क्रान्तिकारी गतिविधियों से सम्बन्धित हैं।

दूसरा कारण यह बताया गया कि काकोरी काण्ड के कुछ कैदियों को छोड़ दिये जाने पर अवांछनीय पदर्शन हुए तथा छूटे हुए कैदियों ने जनता में उत्तेजनात्म भाषण दिये। वायसराय ने गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया एक्ट 1935 की धारा 126 (5) लागू करके प्रान्तीय सरकारों पर प्रतिबन्ध लगा दिया। ऐसी स्थिति में गाँधी तथा सरदार पटेल के परामर्श तथा कांग्रेस कार्यसमिति के प्रस्ताव पर दोनों प्रान्तों के मन्त्रिमण्डल ने त्यागपत्र दे दिये। गवर्नरों ने त्यागपत्र स्वीकार न करके उन्हें स्थगित रखा।

हरिपुरा कांग्रेस अधिवेशन 1938 में इस प्रश्न को लेकर वातावरण गरम था। अधिवेशन में सरदार पटेल ने एक विस्तृत प्रस्ताव प्रस्तुत करके परिस्थिति पर प्रकाश डाला।[28] प्रस्ताव पर बोलते हुए पटेल ने गवर्नरों की आलोचना की तथा कहा–''हमनें पद स्वीकार कर लिये इसलिए हमारा धर्म हो जाता है कि हम जनता की इच्छानुसार शासन करें। जिन लोगों ने देश की आजादी के लिए बड़े–बड़े कष्ट सहे हैं उन्हें हम जेल में रख ही कैसे सकते हैं? वे देश की आजादी के लिए अपने प्राण देने को तैयार थे। भले उनका काम करने का ढंग अलग रहा हो, परन्तु जनमत द्वारा चुने गये कोई मनुष्य ऐसे देशभक्तों को जेल में नहीं रख सकते।[29] हरिपुरा कांग्रेस प्रस्ताव पारित होने के बाद वायसरॉय ने एक वक्तव्य प्रकाशित किया, जिसका उत्तर देते हुए गाँधी जी ने आशा व्यक्त की कि यह संकट दूर हो जायेगा। कुछ समय के बाद राजनैतिक

कैदी छोड़ दिये गये तथा मन्त्रिमण्डल ने त्यागपत्र वापस ले लिए। इस प्रकार संकट समाप्त हो गया।

देश विभाजन की त्रासदी से गुजर रहा था। हालात इतने डरावने व पेचींदा थे कि कांग्रेस को अकेले ही सरकार चलाना कठिन हो रहा था। इसलिए उन्होंने गैर कांग्रेसी नेताओं का सहयोग लेने का निश्चय किया। पंडित नेहरू ने बाबा साहेब से मन्त्रिमण्डल में शामिल होने की प्रार्थना की। प्रमाण स्वरूप बाबा साहेब स्वतन्त्र भारत के पहले कानून मंत्री बने।[29]

एक बार पंडित जवाहरलाल नेहरू से एक पत्रकार ने पूछा कि उनके प्रधानमन्त्री काल की सबसे बड़ी प्राप्ति या सफलता क्या है? तो उनका उत्तर था 'हिन्दू कोड बिल' इस बिल (कानून) के शिल्पकार थे—डा0 भीमराव अम्बेडकर।

बाबा साहेब ने अपने जीवन काल में दलितों के साथ—साथ किसानों, मजदूरों के लिए तो भरपूर संघर्ष किया था। कानून मन्त्री के रूप में उन्होंने हिन्दू कोड बिल की रचना करके भारतीय नारी को समनता का अधिकार भी दिलाया।[30]

अब तक तो ब्राह्मणों ने शुद्र व दूसरे वर्गों के लिए धर्मशास्त्रों में कानून बनाए जिससे हिन्दू समाज टुकड़े—टुकड़े हुआ और सत्यानाश हुआ। अब एक अछूत नेता ने ऐसे कानून बनाये जो समूचे हिन्दुओं को एक सामाजिक और कानूनी सूत्र में बांधते हैं और उससे किसी भी वर्ग के हिन्दुओं को हानि नहीं पहुँचेगी। हिन्दुओं के इतिहास में पहली बार पर्सनल ला बनाया गया।[31]

3—इरविन समझौता :

12 नवम्बर, 1930 को इंग्लैण्ड में प्रथम गोलमेज सम्मेलन में कांग्रेस ने भाग नहीं लिया। इस सम्मेलन के सम्बन्ध में डा0 राजेन्द्र प्रसाद ने कहा कि—''यह दुल्हे के बिना होने वाला विवाह था।''[32] 25 जनवरी, सन् 1931 को गाँधी जी तथा कांग्रेस कार्यसमिति के अनेक सदस्यों को छोड़ दिया गया। गाँधी जी तथा वायसरॉय की बातचीत के परिणामस्वरूप 5 मार्च, 1931 को एक समझौता हुआ जो इतिहास में 'गाँधी—इरविन समझौते' के नाम से जाना जाता है जिसकी कांग्रेस के अन्दर दक्षिणपंथी वर्ग ने प्रशंसा की जब कि वामपंथी वर्ग ने इसे सरकार के समक्ष समर्पण की संज्ञा दी। समझौते की एक शर्त के अनुसार सरदार पटेल सहित समस्त नेताओं को छोड़ दिया गया। जेल से मुक्त होने के पश्चात् 8 मार्च 1931 को अहमदाबाद में एक सार्वजनिक सभा को सम्बोधित करते हुए सरदार पटेल ने स्पष्ट किया कि—यदि हमने द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में अपनी मांगो की स्पष्ट घोषणा की तो यह समझौता राष्ट्र के लिए अहितकर नहीं होगा। कांग्रेस को आमंत्रित करके सरकार ने कांग्रेस की शक्ति को स्वीकार किया। सरदार पटेल के समक्ष मुख्य समस्या गुजरात सरकार द्वारा किसानों की जब्त की हुई भूमि वापस दिलाने की थी। गाँधी तथा पटेल ने एक साथ एक सप्ताह साथ—साथ दौरा करके किसानों को ढाढ़स बंधाया।[33]

4—कांग्रेस अध्यक्ष :

31 मार्च, 1931 को कराचीं से अखिल भारतीय कांग्रेस का 46वाँ वार्षिक अधिवेशन हुआ। सरदार पटेल कांग्रेस के अध्यक्ष निर्वाचित हुए।[34] बारदौली का सरदार अब सम्पूर्ण भारत का सरदार बन गया। गाँधी—इरविन समझौता और कराची अधिवेशन के बीच देश में दो ऐसी घटनाएँ हो चुकी थी जिसके कारण

कराची अधिवेशन पर निराशा के बादल छाये हुए थे। प्रथम 23 मार्च 1931 को भगत सिंह, राजगुरू तथा सुखदेव को फाँसी पर लटका दिया गया और उनके शवों को जला दिया गया था। विरोध स्वरूप कई स्थानों पर हड़तालें हुईं। नवयुवक इतने उत्तेजित थे कि जब गाँधी जी और सरदार पटेल जब कराची स्टेशन पहुँचे तब नौजवानों ने काले झण्डे दिखाकर अपना विरोध प्रकट किया। कानपुर में साम्प्रदायिक दंगे हुए जिनमें गणेश शंकर विद्यार्थी पर घातक प्रहार हुआ और उनकी मृत्यु हो गई। वे 25 वर्ष से लापता थे और उनकी लाश का पता 29 मार्च को चला।

मार्च 1931 में जब कराची में कांग्रेस का 46वाँ अधिवेशन हुआ। उस अवसर पर अध्यक्ष की हैसियत से भाषण दिया कि—अपना छोटा सा भाषण शुरू करने से पहले मैं पण्डित मोतीलाल जी के स्वर्गवास से श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू, पंडित जवाहरलाल नेहरू और उनके परिवार को हुई भारी हानि के लिए सम्मानपूर्वक संवेदना प्रकट करना चाहता हूँ। मुझे विश्वास है कि इस बात से उनका शोक कुछ हल्का होगा कि उनके दुख में सारा देश शामिल है। पंडित मोतीलाल जी की सहायता इस मौके पर कितनी जरूरी थी, यह तो हम सबको और खास तौर पर गाँधी जी को जब पिछले महीने में समझौते की अत्यन्त नाजुक मंत्रणायें चल रही थीं, उस दरम्यान मालूम हो गया।

मौलाना मोहम्मद अली की मृत्यु का घाव ताजा ही था कि पंडित मोतीलाल जी के अवसान का दूसरा घाव देश को सहना पड़ा। यह दुख की बात हैं कि स्वर्गीय मौलाना के साथ हमारा मतभेद था मगर जो दिल में हो वही जबान से बोलने वाले उस बहादुर देशभक्त की देशसेवा कभी भुलाई नहीं जा सकती। मैं बेगम साहिबा, मौलाना शौकत अली और उनके सारे परिवार के साथ आदरपूर्वक हमदर्दी जाहिर करता हूँ।

इसके सिवाय पिछले 12 महीनों में अनेक वीरों और वीरांगनाओं ने प्रशस्त रूप से चलने वाले सत्याग्रह युद्ध में अपने प्राण दिये। ऐसे इतिहास में अज्ञात और कीर्ति के कभी स्वप्न न देखने वाले गुमनाम वीरों के अमर नामों का भी मुझे जिक्र करना चाहिए। परमात्मा उनकी आत्माओं को शान्ति दे। उनके बलिदान हमें आत्मशुद्धि के मार्ग पर अग्रसर करें और हमें अधिक त्याग और तपश्चर्या करने की प्रेरणा दे।

नौजवान भगत सिंह, सुखदेव और राजगुरू की थोड़े ही दिन पहले फाँसी हुई है जिससे देश बेहद उत्तेजित हो गया है। जिन युवकों की कार्यपद्धति से मुझे वास्ता नहीं है। मैं यह नहीं मानता कि और किसी उद्देश्य से हत्या करने की अपेक्षा देश के लिए हत्या करना निन्दा है। फिर भगत सिंह और उनके साथियों की देशभक्ति, हिम्मत और कुर्बानी के सामने मेरा सर झुक जाता है। इन युवकों को दी गई फाँसी की सजा को देश से निकाले में बदल देनें की लगभग सारे देश की माँग होते हुए भी सरकार ने उसे फाँसी दे दी थी। इससे प्रकट होता है कि मौजूदा शासन तन्त्र कितना हृदयहीन है।''[35] अहिंसारूपी शास्त्र के महत्व पर प्रकाश डालते हुए सरदार पटेल ने कहा–''अहिंसा का सामुदायिक प्रयोग अब स्वप्नदर्शियों का स्वप्न या मनुष्य का मिथ्या मनोरथ नहीं रहा, परन्तु वह सच्ची सिद्ध वस्तु है। अब तक मानव जाति हिंसा को देवी बनाकर बैठी हुई थी। वह उससे परेशान थी, परन्तु अहिंसा की सफलता के बारे में उसे विश्वास नहीं था। अहिंसा के हमारे सफल प्रयोग ने उसमें भविष्य के लिए नई आशाओं का संचार किया है।[36]

सरदार ने प्रतिनिधियों से आग्रह किया कि गाँधी–इरविन समझौते को अस्वीकार न करें। उनका कहना था कि ''कार्यसमिति के सदस्य आपके विश्वासपात्र प्रतिनिधि थे, इसलिए आप उनकी की हुई सन्धि को अस्वीकार नहीं कर सकते।[37] पटेल का तर्क था कि कांग्रेस लाहौर के पूर्ण स्वराज्य के

निश्चय से पीछे हटना नहीं चाहती।'' पूर्ण स्वराज्य का अर्थ यह नहीं है कि ब्रिटेन या और किसी सत्ता के साथ कोई भी सम्बन्ध न रखने की बात हम हमेशा के लिए पकड़े रहेंगे। एक दूसरे के हित के लिए हम दूसरे राज्यों के साथ सहयोग जरूर कर सकते हैं और वह सहयोग हम जब चाहें तब तोड़ सकते हैं।[38] हिन्दू–मुस्लिम सम्बन्धों पर लाहौर कांग्रेस में स्वीकृति नीति की चर्चा करते हुए सरदार पटेल ने कहा कि कांग्रेस स्वीकार करती है कि–''भारत के स्वतन्त्र होने प्रर साम्प्रदायिक सवालों का फैसला केवल राष्ट्रीय हित से होना चाहिए.....इसलिए यह सभा सिक्खों, मुसलमानों और दूसरी छोटी जातियों को विश्वास दिलाती है कि कांग्रेस किसी भी भावी संविधान में इस प्रश्न का ऐसा निर्णय स्वीकार नहीं किया जायेगा जिससे सब दलों को सन्तोष न हो।[39]

सरदार पटेल ने अपने भाषण में विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार, शराब बन्दी, समान दर्जे का अर्थ, नमक कर, श्रमिकों के प्रति कांग्रेस की नीतिः अस्पृश्यता का कलंक, प्रवासी भारतीय आदि पर प्रकाश डाला।

करांची अधिवेशन इस कारण से बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें ''मौलिक अधिकारों तथा आर्थिक व्यवस्था'' सम्बन्धी प्रस्ताव पारित हुआ जो स्वतन्त्र भारत के संविधान का मार्गदर्शक बना।

उस समय की राजनीतिक स्थिति में कांग्रेस की बागडोर को सम्भालना आसान न था। परन्तु सरदार पटेल ने अपनी व्यवहार–दक्षता के आधार पर उस जिम्मेदारी को निभाया। सर्वप्रथम गाँधी–इरविन समझौता की शर्तों को लागू करना था। 18 अप्रैल 1931 को लार्ड इरविन के स्थान पर लार्ड विलिग्टन वायसराय बने। वे बम्बई तथा मद्रास के गवर्नर रह चुके थे तथा स्वभाव से कठोर तथा कांग्रेस विरोधी थे। जगह–जगह पर समझौते की शर्तों

का उल्लंघन किया जा रहा था तथा अत्याचार हो रहे थे। गुजरात में जिन पटेल–पटवारियों ने आन्दोलन के समय त्यागपत्र दे दिये थे, उन्हें वापस नौकरी पर लाने के बारे में स्थानीय अधिकारी तरह–तरह के अड़ंगे लगा रहे थे। सरहद प्रान्त में खुदायी खिदमतगारों पर मारपीट करने तथा दूसरे अमानवीय व्यवहार करने के समाचार आ रहे थे। जुलाई 1931 में जब गाँधी जी शिमला में थे तभी बारदौली में लगान वसूल करने के लिए वहाँ कर्मचारी तथा पुलिस अत्याचार कर रहे थे। बारदोली से गाँधी जी को शिमला भेजे गये अनेक तार सरदार पटेल के मानसिक स्थिति का आभास कराते हैं। 21 जुलाई 1931 को एक तार से सरदार ने सन्देश भेजा–''पुलिस का जुल्म असह्य होता जा रहा है। किसानों की भीड़ शिकायत करने कलए आश्रम में उमड़ आती है।...बारदौली के कोने–कोने पर पुलिस लगा दी गई है और पुलिस द्वारा स्त्रियाँ सताये जाने की तथा न सुनने जैसी गालियों की शिकायत करते हैं। यदि इस कष्ट का इलाज हो ही नही सके तो भगवान के लिए अब तो लड़ाई शुरू करने दीजिए।[40]

कांग्रेस के अन्दर भी सरदार पटेल को अनेक कठिनाइयों और आलोचनाओं का सामना करना पड़ा। प्रथम बंगाल सरदार से असन्तुष्ट था क्योकि कांग्रेस कार्यसमिति में उसकी उपेक्षा की गई। बंगाल कांग्रेस की आन्तरिक समस्या के समाधान हेतु सरदार ने सुभाषचन्द बोस को दिल्ली आमन्त्रित किया। परन्तु बोस आने से इन्कार कर दिये। उस समय बंगाल कांग्रेंस में सुभाषचन्द्र बोस तथा सेना में गुप्त विवाद था। अपने एक पत्र में सरदार पटेल ने नेहरू को लिखा–''सुभाष हमसे रुष्ट हैं क्योंकि पिछली कार्यसमिति में हमने उनकी इच्छानुसार उनके आन्तरिक विवाद में हस्तक्षेप करने से इन्कार कर दिया.....मैंने उन्हें दिल्ली बुलाने के लिए तार दिया.....

उन्होंने तार देकर मुझे उत्तर दिया कि वह दिल्ली नहीं आ सकते। हम उन्हें कलकत्ता में मिलें।[41]

कभी–कभी सरदार पटेल ने कांग्रेस अध्यक्ष के क्षेत्राधिकार से अधिक हस्त़क्षेप का कार्य किया। पुरी में कांग्रेस अधिवेशन के पूर्व उन्होंने पुरी के जिला कांग्रेस अध्यक्ष को आदेश दिये कि जगन्नाथ के मन्दिर से ''अश्लील अवशेषों को हटा दिये जायें।[42] उन्होंने उसकी चिन्ता न की। पुरातत्व और ऐतिहासिक दृष्टि से उसका महत्व है इसके लिए उन्होंने किसी से परामर्श नहीं लिया। भाग्यवश पुरी में अधिवेशन नहीं हुआ। आर0 डी0 शंकरदास ने लिखा है–यद्यपि संगठनकर्त्ता के रूप में सरदार पटेल निपुण थे परन्तु एक समझौतावादी के रूप में उनमें कमियाँ थीं। वे स्वयं स्वीकार करते हुए कहा करते थे कि वे अनुशासनहीन तथा पार्टी के विरुद्ध कार्य करने वालों के प्रति कोई सहानुभूति नहीं रखते। ''गाँधी जी के ढंग शान्ति तथा अनुनय के हैं।'' पर वह उसमें विश्वास नहीं रखते, उन्होंने सरकार को चेतावनी दी कि यदि गाँधी जी की अनुपस्थिति में उसने गाँधी–इरविन समझौते की शर्तों को उलंघन किया तो वे पुनः आन्दोलन चलाने से नहीं घबरायेंगे।[43] अध्यक्ष के रूप में साम्प्रदायिक समस्या के समाधान में उन्होंने विशेष रूचि नहीं ली। उनका अधिकतर समय सरकार द्वारा गुजरात में समझौते की शर्तों का सतत् खण्डन में लगा रहा।

5–द्वितीय गोलमेज सम्मेलन तथा पटेल की गिरफ्तारी :

दिसम्बर 1931 में इंग्लैण्ड के द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में गाँधी जी को भाग लेना था। सरकार द्वारा गाँधी–इरविन समझौते के उलंघन के कारण गाँधी जी अपनी प्रस्तावित लंदन यात्रा पर पुनः विचार करने को बाध्य हुए। 25 अगस्त 1931 को समस्या के समाधान हेतु गाँधी, नेहरू, पटेल तथा खान

अब्दुल गफ्फार खाँ का एक प्रतिनिधि मण्डल शिमला में वायसराय से मिला। वायसरॉय के अनेक मामलों में आश्वासन के उपरान्त 29 अगस्त को पानी के जहाज द्वारा गाँधी जी ने लंदन के लिए प्रस्थान किया। वायसराय ने यह भी आश्वासन दिया था कि बारदौली में लगान वसूली के समय पुलिस के ज्यादतियों के विरुद्ध जाँच होगी। भारत में गाँधी जी की अनुपस्थिति में गवर्नर जनरल लार्ड विलिग्टन के निर्देश पर ब्रिटिश नौकरशाही ने गाँधी–इरविन का खुला उल्लंघन प्रारम्भ कर दिया। सरकार ने कांग्रेस पर आरोप लगाया कि उसने संयुक्त प्रान्त में किसानो को लगान न देने के लिए उत्साहित किया तथा सीमा प्रान्त में खान अब्दुल गफ्फार खाँ के नेतृत्व में खुदाई खिदमतगार पुनः सविनय अवज्ञा आन्दोलन प्रारम्भ करने की तैयारी कर रहे थे। बंगाल की स्थिति भयंकर थी। सरदार पटेल ने बारदोली जाँच समिति से अपने को अलग कर लिया। 8 नवम्बर 1931 को पटेल द्वारा गाँधी जी को भेजा गया तार उस समय की विषम स्थिति का चित्रण करता है। तार में कहा गया– यहाँ की स्थिति अधिकाधिक नाजुक बनती जा रही है। सरकार का रवैया आम तौर पर बहुत ज्यादा बिगड़ गया है। बंगाल की स्थिति और भी खराब होती जा रही है। सरहद प्रान्त में जुल्म बढ़ रहा है। संयुक्त प्रान्त में लगान बन्दी की लड़ाई जल्दी शुरू करना अनिवार्य जान पड़ता है। वारदौली की जाँच में कार्यवाही सन्तोषजनक ढंग से न होने के कारण और दूसरे कारणों से मालूम होता है कि उससे हट जाना पड़ेगा। आपका जल्दी आना वांछनीय है। यूरोप में अधिक दिन लगायेंगे तो यहाँ का काम बिगड़ेगा।''[44]

सरकार का आतंक तथा अत्याचार जारी था। 23 नवम्बर को अपने दूसरे तार में पटेल ने गाँधी जी को पुनः स्थिति से अवगत कराते हुए लिखा–

''हिजली और चटगाँव के मामलों में अभी तक कुछ नहीं हुआ। बिना किसी कारण के धर–पकड़ जारी है। नजरबन्दी की संख्या एक हजार तक

पहुँच गई है....लोगों में तीव्र रोष फैला हुआ है। युवक वर्ग में निराशा से प्राणों पर खेल जाने की वृत्ति पैदा हो गई है।[45] जहाँ पर एक ओर समझौते को ताक में रखकर सरकार भारतवर्ष में खुली दमन नीति चला रही थी। वहाँ पर दूसरी ओर गाँधी जी गोलमेज सम्मेलन में अपने भाषणों द्वारा भारत का पक्ष प्रस्तुत कर रहे थे, परन्तु ब्रिटिश राजनीतिज्ञों के समक्ष भाषण देना व्यर्थ था। इंग्लैण्ड में मजदूर दल की सरकार के स्थान पर मिली–जुली सरकार गठित हो चुकी थी। जिसमें अनुदारदल को बहुमत प्राप्त था।

04 जनवरी 1932 को गाँधी जी तथा कांग्रेस अध्यक्ष सरदार पटेल गिरफ्तार कर लिये गये। जवाहरलाल नेहरू, पुरुषोत्तम दास टण्डन, सीमा प्रान्त की खान बन्धु सहित अनेक नेता पहले ही गिरफ्तार कर लिये गये थे। जो नेतागण गाँधी जी से मिलने बम्बई आये थे, उन्हें भी अपने प्रान्त की ओर लौटते समय पकड़ लिया गया।

1–रास गाँव में गिरफ्तारी :

''सरदार'' ने तय किया कि गाँधी जी की दाण्डी यात्रा के पूर्व ही उनसे प्रवास मार्ग के आस–पास के क्षेत्र में दौरा करके अपने भाषणों द्वारा जनता को आन्दोलन के लिए प्रेरित करेंगे। 07 मार्च 1930 को सरदार बोरसद ताल्लुके में रास गाँव पहुँचे, जहाँ एक बहुत बड़ी संख्या में लोग उनके स्वागत तथा भाषण सुनने हेतु एकत्रित थे। सरदार अपना भाषण प्रारम्भ भी न कर पाये थे कि एक मजिस्ट्रेट ने उन्हें भाषण न देने का निर्देश दिया।[46] सरकार द्वारा सरकारी आदेश मानने से इन्कार करने पर उन्हे बन्दी बना लिया गया तथा बोरसद लाया गया। एक सच्चे सत्याग्रही के रूप में सरदार ने न्यायालय में अपने बचाव में कुछ भी कहने से मना कर दिया। परिणामस्वरूप मजिस्ट्रेट ने उन्हें तीन माह की साधारण कारावास तथा 500 रुपये जुर्माना देने की

सजा सुनाई। जुर्माना न देने की स्थिति में तीन सप्ताह तक और सजा भुगतने का आदेश दिया गया। यह सरदार की पहली गिरफ्तारी थी। सरदार के गिरफ्तारी के समाचार से सम्पूर्ण गुजरात क्षेत्र में तीव्र प्रतिक्रया हुई। अहमदाबाद में गाँधी जी की अध्यक्षता में एक विशाल सभा हुई जिसमें सरदार के गिरफ्तारी के विरोध में प्रस्ताव पारित किया गया। रास गाँव में अनेक पटेल, पटवारी तथा चौकीदारों ने अपने पद से त्यागपत्र दे दिये। अहमदाबाद के वकीलों का मत था कि सरदार ने भले ही कहा हो (मैं अपराध स्वीकार करता हूँ) परन्तु उन्होंने कोई भाषण नहीं दिया। केवल भाषण देने की अपनी इच्छा प्रकट की। सरकार के कानूनी सलाहकार दादा साहब मावलंकर ने जेल में सरदार से भेंट करके उनका लिखित बयान लिया।[47]

केन्द्रीय सभा में मदनमोहन मालवीय ने सरदार की गिरफ्तारी तथा सजा पर स्थगन प्रस्ताव रखा जो पारित न हो सका। उस प्रस्ताव के सम्बन्ध में बोलते हुए मुहम्मद अली जिन्ना ने कहा–''माननीय गृहमन्त्री के कथनानुसार सरदार वल्लभ जी पटेल ने अपनी गिरफ्तारी से पूर्व बहुत से भाषण दिये थे। मैं पूछता हूँ, क्या वे भाषण कानून के विरुद्ध थे? सवाल तो यह है कि उन्होंने कानून की मर्यादाओं का उल्लंघन किया था या नहीं?[48] अलबत्ता, विचार–स्वातन्त्र्य का दुरूपयोग हो सकता है। कई बार उसका दुरूपयोग हुआ भी है। परन्तु उससे भी ज्यादा खतरनाक तो यह है कि सरकार विचारों को दबा देने का अधिकार धारण कर ले। मानव जाति के लम्बे इतिहास में सरकारों ने इस प्रकार की सत्ता का दुरूपयोग किया है। हमारे सामने विचार करने लायक सीधा मुद्दा यह है कि क्या उपाय करने से राजतन्त्र को व्यवस्थित और बुद्धिमान बनाया जा सकता है–इस प्रकार की रुकावटों से या आजादी देने से?[49]

साबरमती जेल में पटेल अकेले थे। अतः उन्होंने डायरी लिखने का विचार किया। 07–03–1930 से 123–04–1930 की अवधि में पटेल ने जेल की महत्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन किया। इस डायरी के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि पटेल पूर्ण रूप से राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रति समर्पित थे। उनकी गुजरात तथा गाँधी जी के प्रति अटूट निष्ठा थी।50 जेल में 'क' व 'स' वर्ग के कैदियों के भोजन में अन्तर था। सरदार पटेल का तर्क यह था कि सभी कैदियों को एक–सा भोजन दिया जाये। इसके लिए उन्होंने उपवास किया तथा जेल अधिकारियों को उनके आगे झुकना पड़ा। पौने चार महीने जेल में रहने के पश्चात् 26 जून 1930 को सरदार वल्लभभाई को साबरमती जेल से छोड़ दिया गया। उस समय देश का वातावरण गरम था। सविनय अवज्ञा आन्दोलन में भाग लेने के कारण कांग्रेस के सम्पूर्ण महत्वपूर्ण नेता जेल में थे। जब जवाहरलाल नेहरू गिरफ्तार किये गये तो कांग्रेस अध्यक्ष का कार्यभार मोतीलाल नेहरू के कन्धों पर आ गया और 30 जून, 1930 को मोतीलाल बन्दी बना लिये गये तो उन्होने सरदार पटेल को कांग्रेस अध्यक्ष मनोनीत किया।

ब्रिटिश सरकार ने आन्दोलन को दबाने के लिए हिंसा तथा अत्याचार का सहारा लिया। अनेक समाचार पत्र जिनकी विचारधारा राष्ट्रीय थी, बन्द कर दिए गए। कांग्रेस समिति तथा उसकी विभिन्न इकाइयों पर प्रतिबन्ध लगा दिया तथा कांग्रेस के कार्यालयों को सील कर दिया गया। महत्वपूर्ण नेताओं के जेल में होने के कारण 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' को चलाने का भार सरदार पटेल के कन्धे पर आ गया। यद्यपि सरदार पटेल अस्वस्थ थे परन्तु उन्होंने साहस से नेतृत्व को संभाला। बम्बई में एक पत्रकार सम्मेलन में सरदार ने कहा–''मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक प्रान्त, जिले व तहसील में प्रत्येक नर, नारी तथा बालक अनुभव करें कि कांग्रेस संगठन को अवैध घोषित करने

पर समस्त महत्वपूर्ण नेताओं को बन्दी बनाने पर राष्ट्रीय संघर्ष हेतु प्रत्येक कांग्रेस कार्यकर्त्ता स्वयं में कांग्रेस समिति बन जायेगा।[51]

उस समय एम0 आर0 जयकर तथा तेज बहादुर सप्रू सरकार तथा कांग्रेस के मध्य समझौता कराने का प्रयास कर रहे थे। समझौता प्रयास पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए सरदार पटेल ने कहा–''कोरी मध्यस्थता की बातें करने से लोगों के भुलावे में पड़ने तथा लड़ाई में शिथिलता आने का भय रहता है। समझौते का समय अभी बहुत दूर है और यदि हम गाफिल रहकर शिथिल हो जायेंगे तो वह और भी दूर चला जाएगा। इसलिए ऐसी मिथ्या बातों पर जरा भी ध्यान न देकर कांग्रेस का काम सबको अधिक जोरों से जारी रखना चाहिए। कोई यह नहीं भूले कि लड़ाई का जल्दी अन्त लाने का यही उपाय है।[52]

बम्बई में खानू भाई वाडी में एक जनसभा को सम्बोधित करते हुए सरदार ने छात्रों से कहा–''मुझे हिन्दुस्तान के सेनापति की जगह दी गयी है। मैं किसान हूँ साफ बात कहूँगा, अस्पष्ट बातें नहीं करूँगा। मुझे सफाई की झूठी और गलत बातें नहीं आतीं। मेरे पास प्रपंच नहीं चल सकता। कालेज के विद्यार्थी चिल्लाहट तो बहुत मचाते थे। जिसकी पूजा करते थे, वह जवानों का नूर पंडित जवाहरलाल जेल में हैं। उसने आशा रखी थी कि कालेजों में पढ़ने वाले विद्यार्थी बाहर आ जायेंगे, कल मुझसे सब मिलने आयेंगे तो मैं उन्हें ऐसी बातें कहूँगा कि खड़े–खड़े जल उठें। बम्बई के व्यापारियों से कहने का अवसर नहीं है। उन्होंने जो कुर्बानियाँ की हैं उस पर मुझे गर्व है। उन्हें धन्यवाद देता हूँ। मगर इतना काफी नहीं है। पीछे हटने की बात न करो। कलंक का टीका न लगवाओ इज्जत के सौदे में पीछे मत रहना।[53] तथा सैकड़ों माताओं पर पुलिस ने अमानुषिक व्यवहार किया है तो तुम गणित तथा इतिहास पढ़ने में व्यस्त हो।[54]

सरदार पटेल के समक्ष मुख्य समस्या धन तथा कार्यकर्त्ताओं की थी। 14 जुलाई 1930 को बम्बई में उनके सन्देश के उपरान्त घर–घर से कार्यकर्त्ता बनाने तथा धन इकट्ठा करने का सप्ताह मनाया गया।[55]

2–पुनः जेल में :

वर्ष 1931 में पटेल को तीन बार बन्दी बनाया गया। 31 जुलाई 1930 को लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की जयन्ती पर बम्बई में एक जुलूस का आयोजन किया गया जिसमें पटेल के अतिरिक्त मदनमोहन मालवीय, जयराम दास, दौलतराम, शेरवानी आदि अनेक नेताओं ने भाग लिया। परन्तु बोरी बन्दर स्टेशन के निकट पहुँचते ही जुलूस को अवैध घोषित कर दिया गया। जुलूस ने वहाँ से हटने से इन्कार किया तथा सब लोग वहीं बैठ गये। रात में मूसलाधार बरसात हुई। प्रातः अन्य नेताओं के साथ सरदार पटेल को गिरफ्तार किया गया। उन्हें तीन माह की सजा दी गई और यरवदा जेल में भेज दिया गया।

5 नवम्बर, 1930 को सरदार को जेल से छोड़ा गया।[56] जेल से निकलने के बाद सरदार पटेल ने अनेक उत्तेजित भाषण दिये। बम्बई में मांडवी के खादी की दुकान का उद्घाटन करते समय पटेल ने कहा कि–''बम्बई आज मेरे लिए नया कहने से क्या हो सकता है? यहाँ तो कई बड़े–बड़े नेता आये हैं और आयेंगे। वे आपसे जो कहना था, सो कह चुके हैं। बम्बई के लिए आज कोई नई बात सुनने की नहीं हो सकती। मुझसे मिलने, मुझे देखने और मेरी आवाज सुनने की इच्छा आपको हो यह ठीक है। वैसे मेरे दिल की बात आपसे कहाँ छिपी है? इस वाणी पर दुनिया में कोई ताला नहीं लगा सकता। वह तो मैं जेल में बैठा रहूँगा तो भी आप तक पहुँचेगी और आपके हृदय में बैठ जायेगी।'' दिसम्बर 1930 को उन्हें बम्बई में उपयुक्त भाषण के आरोप में

बन्दी बनाया गया। इसके अतिरिक्त उन पर अनेक आरोप लगाये गये और नौ मास का कारावास की सजा दिया गया।

****

सन्दर्भ–

3:1

1. रावाजी भाई मणि भाई पटेल ''हिन्द के सरदार'' पृ0 205
2. 254. चिटगाँव हिल ट्राइब्स के क्षेत्र के सम्बन्ध में पटेल का माउण्ट बैटन को पत्र 13 अगस्त 1947–दुर्गादास (सम्पादित) सरदार पटेल कारसपान्डेन्स खण्ड0–4 नं0 167
3. 255. के0 एम0 मुन्शी पूर्वो खण्ड 1 पृ0 131
4. 256. के0 एम0 मुन्शी पूर्वो खण्ड 1 पृ0 131
5. 257. के0 पी0 बहादुर हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेन्ट इन इण्डिया वाल्यूम 4 पृ0 141
6. अम्बेडकर वी0आर0–दलित एवं पिछड़े वर्ग की राजनैतिक भागीदारी सम्पूर्ण वाग्मयः वैल्यूम–18 पृष्ठ 113 से 115
7. जी0 एम0 नन्दूरकर पूर्वो भाग–2 पृष्ठ 42
8. जी0 एम0 नन्दूरकर पूर्वो भाग–1 पृष्ठ 94–96
9. वी0 पी0 मेनन पूर्वो पृष्ठ 231
10. वी0 पी0 मेनन पूर्वो भाग–1 पृष्ठ 122–123
11. वी0 पी0 मेनन पूर्वो भाग–1 पृष्ठ 107
12. वी0 पी0 मेनन पूर्वो भाग–1 पृष्ठ 107
13. वी0 पी0 मेनन पूर्वो भाग–1 पृष्ठ 107
14. जी0 एम0 नन्दूरकर पूर्वो भाग–2 पृष्ठ 74
15. जी0 एम0 नन्दूरकर पूर्वो भाग–2 पृष्ठ 75
16. वीर केशवर प्रसाद सिंह ''भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास'' (ज्ञानदा प्रकाशन (पी0 डी0) नई दिल्ली)
17. वी0 पी0 तहतनकर, सरदार पटेल, पृष्ठ 226

18. वी0 पी0 मेनन, पूर्वो, पृष्ठ 228
19. वी0 पी0 मेनन, पूर्वो, पृष्ठ 129
20. वी0 पी0 मेनन, पूर्वो, पृष्ठ 129
21. वी0 पी0 मेनन, पूर्वो, पृष्ठ 137–138
22. वी0 पी0 मेनन, पूर्वो, पृष्ठ 138
23. जी0 एम0 नन्दूकर, सम्पादित : सरदार पटल इन दि टियुन वदि दि मिलियन्स, खण्ड–1, पृष्ठ–61–64
24. वी0 पी0 मेनन, पूर्वो, पृष्ठ 144
25. के0 एम0 मुन्शी, पूवो, खण्ड–1 पृष्ठ 166
26. वी0 पी0 मेनन, पूर्वो, पृष्ठ 334
27. उस समय संविधान सभा तथा उपनिवेश संसद एक ही थी।
28. जी0 एम0 नन्दूरकर, पूर्वो, पृष्ठ 66
29. जी0 एम0 नन्दूरकर, पूर्वो, पृष्ठ 67
30. वी0 पी0 मेनन, पूर्वो, पृष्ठ 354
31. वी0 पी0 मेनन, पूर्वो, पृष्ठ 354
32. जी0 एम0 नन्दूरकर, पूर्वो, पृष्ठ 305
33. जी0 एम0 नन्दूरकर, पूर्वो, पृष्ठ 309
34. के0 एम0 मुन्शी, पूर्वो खण्ड –1 पृष्ठ 170
35. जी0 एम0 नन्दूरकर, पूर्वो, पृष्ठ 316
36. के0 एम0 मुन्शी, पूर्वो, खण्ड–1 पृष्ठ 175
37. के0 एम0 मुन्शी, पूर्वो, खण्ड–1 पृष्ठ 170
38. दुर्गादास (सम्पादित) सरदार पटेल कारसपोन्डेन्स, 1945–50, खण्ड–1 पृष्ठ 33
39. वही, परिशिष्ट 8 से पृष्ठ 339–341
40. वही, पृष्ठ 341

41.वी0 पी0 मेनन, पूर्वो, पृष्ठ 400

42.जी0 एम0 नन्दूरकर, पूर्वो, पृष्ठ 73

43.जी0 एम0 नन्दूरकर, पूर्वो, पृष्ठ 73

44.दुर्गादास, पूर्वो, पृष्ठ 194

45.जी0 एम0 नन्दूरकर (सम्पादित) दिस वाज़ सरदार दि कमोमेरेटिव वाल्यूम, पृष्ठ 335

46.प्रकाशक टिप्पणी (दुर्गादास), पूर्वो, पृष्ठ 10

47.के0 एम0 मुन्शी, पूर्वो, खण्ड–1 पृष्ठ 173–174

48.के0 एम0 मुन्शी, पूर्वो, खण्ड–1 पृष्ठ 174

49.उद्धृत वी0 पी0 मेनन, पूर्वो, पृष्ठ 488

50.वी0 पी0 मेनन, पूर्वो, पृष्ठ 477–479

51.वी0 पी0 मेनन, पूर्वो, पृष्ठ 481

52.जी0 एम0 नन्दूरकर (सम्पादित) दिस वाज़ सरदार दि कमोमेरेटिव वाल्यूम, पृष्ठ 3

53.आर0 आर0 दिवाकर ''ह्वेन कम्स सच एन अदर'' वही, पृष्ठ 393

54.मोरारजी देसाई ''सरदार बल्लभभाई पटेल : ऐज आई0 न्यू हिम'' वही, पृष्ठ 409

55.डॉ0 रघुवीर सिंह ''हिज रोल इन यूनीफाइंग इण्डिया'',पृष्ठ 16–17

56.डॉ0 रघुवीर सिंह ''हिज रोल इन यूनीफाइंग इण्डिया'',पृष्ठ 17.

❑❑❑